सामाजिक अंधश्रद्धा --

मनुष्य समाज का जब से निर्माण हो गया तभी से सारी सृष्टि के बारे में उसके मन में जिज्ञासा उत्पन्न हुई। इन सारी जिज्ञासाओं का उत्तर पाने के लिए वह लालायित रहा। जिन सवालों का जवाब उसने नहीं पाया उसके पीछे होनेवाली एक शक्ति के प्रति उसके मन में श्रध्दायुक्त भय निर्माण हुआ और उसी को बाद में 'ईश्वर' संज्ञा दी गयी। यही ईश्वर इस सारी सृष्टि का संचालक है और वही ऐसी अज्ञात घटनाओं का निर्माण करता है। बाद में उसे खुश करने के लिए कई तरह के आडम्बरों का निर्माण हुआ। इनका फायदा सामन्ती युग तक आते-आते उच्चवर्गीय लोग उठाने लगे। इन उच्चवर्गीय लोगों ने निम्न वर्गीय लोगों के अज्ञान का फायदा उठाते हुए धर्म की आड़ लेकर उनपरकई तरह के जुलूम ढ़ाये,अन्याय-अत्याचार किये। उन्हें शिक्षा से हमेशा वंचित रखा और यही वजह है कि उन निम्नवर्णीय लोगों में अंधश्रद्धा और अंधविश्वास की मात्रा बढ़ने लगी।

उच्चवर्णीय लोगोंद्वारा शूद्रों को इस अज्ञान,अंधश्रद्धा का फायदा उठाकर धर्म की आड़ में उनसे पैसे वसूल करने की बात भी उनके समझ में कभी नहीं आती थी। वे बार-बार ठगे जाते रहे। सामन्ती युग में सामन्त अपने पापों के प्रक्षालन हेतु धार्मिक आडम्बर किया करते थे। इनके लिए भी वे निम्नवर्णीय लोगों से ही पैसे वसूल किया करते थे। ईश्वर के प्रति उन लोगों की श्रद्धा अंधश्रद्धा में कब बदल गयी,इस बात का पता तक उन्हें नहीं चला। यहाँ तक कि गाँव में फैलनेवाली बिमारियों की वजह भी वे लोग ईश्वर को ही मानने लगे। ये सभी बिमारियाँ वही फैलाता है और उसका कोप हुआ है, ऐसा वे मानते थे। फिर उसे खुश करने के लिए कई तरह के आडम्बर वे लोग करने लगे और उच्चवर्णीय लोगों को मौका मिलने लगा कि वे निम्नवर्णीय लोगों का और अधिक शोषाण करें।

नागार्जुन द्वारा लिखा गया 'रतिनाथ की चाची' उपन्यास इन्हीं

सामाजिक अंधश्रद्धाओं का विश्लेषण करता है। 'रतिनाथ की चाची' में सामन्तवर्गीय कुलीन मैथिल ब्राह्मण समाज में वैधव्य की असह्य पीड़ाओं के बोझ से दबी भारतीय नारी की करुण वेदनाकी कहानी कही गयी है।[१]

सामन्तकालीन मिथिलांचल में कई तरह की सामाजिक अंधश्रद्धाएँ देखी जा सकती है, जिनका 'रतिनाथ की चाची' में वर्णन किया गया है। इन्हें हम निम्नलिखित विभागों में विभाजित कर सकते हैं --

(१) प्रचलित रूढ़ियाँ।
(२) शगुन - अपशगुन।
(३) पूजा-पाठ।
(४) मनौतियाँ।
(५) भूत-प्रेतों में विश्वास।
(६) परंपराएँ।

(१) प्रचलित रूढ़ियाँ --

ग्रामीण समाज में जब कोई कार्य किसी घटना के साथ जुड़ जाता है तब वह रूढ़ि बन जाती है। जैसे अगर एक बार किसी ने कुछ ऐसी बातें कहीं या की और संयोग से बरसात होगयी तो हर साल वही व्यक्ति, वही बात कहता या करता है। अर्थात् वह रूढ़ि बन जाती है। लोगों का ईश्वर के प्रति गहरा विश्वास भी इसके पीछे काम करता है। लोग सोचते है कि अगर हम इनरूढ़ियों का, रीतियों का, परंपराओं का पालन करेंगे तो ईश्वर हमें मनचाही चीजें देगा। और अगर हमने उसका पालन नहीं किया तो उसके लोप का भाजन हमें बनना पड़ेगा।

'रतिनाथ की चाची' के शंकरबाबा भी ऐसा ही एक रूढ़ियों को

---

१ डा.बदरीप्रसाद - प्रगतिवादी हिंदी उपन्यास - पृ.१२२।

माननेवाला व्यक्ति है। जब शंकरबाबा गौरीऔर रतिनाथ को छोड़ने जा रहे थे तो वे बैलगाड़ी में नहीं बैठते है, गाडी के साथ-साथ चलते रहते है। रतिनाथ जब देखता है तो पूछ लेता है। तो शंकरबाबा कहते है -- 'बच्चा अब कोई इन बातों का विचार नहीं करता। बैल उहरे शिवजी के वाहन। इनके चारों पैर धर्म के ही चार चरण। इसलिये ब्राह्मण न हल जोतते हैं, न गाड़ी चलाते हैं। चढ़ना भी मना है।'[१]

अगर कोई किसी भी प्रकार की भूल या गलती करें तो उसे उसका प्रायश्चित करना पड़ेगा और प्रायश्चित करने के बाद सत्यनारायण की पूजा भी करनी चाहिए ऐसी रूढ़ि प्रचलित थी। इसीलिये तो जब गौरी प्रायश्चित कर लेती है तो उसकी मैं ठीक ग्यारहवें दिन सत्यनारायण की पूजा करती है।

रूपरानी के बच्चे को जब लाल चींटा काट लेता है तो दम्मो फूफी कहती है -- 'जाओ रूपरानी, लोहा छुआ दो। जलन जाती रहेगी।'[२] यह भी एक प्रचलित अंधश्रद्धा है।

गौरी की मैं जब शाम के वक्त एक ही तारा देख लेती है तो वह हाथ जोड़कर उस तारे को प्रणाम करती है और श्लोक पढ़ती है --

'एका तारा मया दृष्टा द्वितीया नैव दृष्यते।
तद्दोषा परिहाराय नारदाय नमोऽस्तुते।'[३]

अर्थात मैंने एक नक्षत्र (तारा) देखा। दूसरा नहीं देख रही हूँ। इससे दोषा लगेगा, अ-कल्याण होगा। हे नारद, मैं तुम्हें नमस्कार करती हूँ। देखना, किसी से झगड़ा न लगे।

---

१ नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ.५५।

२ वही - पृ.८।

३ वही - पृ.२७।

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

जयनाथ ने जब अपनी समस्या ताराबाबा को बता दी तो तारा बाबा ने उसे एक मंत्र भोजपत्र पर लिखकर दे दिया। लेकिन जयनाथ ने उसे तरकुलवा इसलिये नहीं भेजा क्योंकि लिफ़ाफ़े में भेजने से मंत्र का प्रभाव घट जाता है। और शूद्र (कुल्ठी राऊत) के द्वारा भेजा नहीं जा सकता था, इसलिये उन्होंने रतिनाथ को भेजने की बात सोची।

गौरी अपने मायके तरकुलवा में जाकर अपने पेट का बच्चा गिराकर वापस आ जाती है फिर भी समाज उसे मान्य नहीं करता। औरतें कहती हैं कि उसके इस पाप का हमारे जीवन पर असर पड़ेगा। पूरे शुभंकरपुर गाँव का नाम तो बदनाम हो ही गया। इसी तरह जब लक्ष्मीनारायण के ससुर के गाँव में एक ब्राह्मण की हत्या हो जाती है तब पूरे गाँव को पाप लगेगा यह सोचकर उसे प्रायश्चित्त लेने पर मजबूर कर दिया जाता है।

जब कोई आदमी दूसरे शहर में या गाँव में शादी के लिए गया हो और अगर वह नजदिकी रिश्तेदार हो तो वह जब वापस लौटे तो अगर उसने लाल धोती पहन रखी हो तो देखनेवाले समझ जाते हैं कि शादी निर्विघ्न संपन्न हो गयी है। ऐसी मान्यताएँ आज भी देहातों में पायी जाती हैं।

गाँव में ऐसी भी प्रचलित रूढ़ि है कि जब किसी का ब्याह हो जानेपर गौना कराके लड़की को घर लाया जाता है तो कई तरह के मंगल गीत गाये जाते हैं। गौरी की भी बहु जब आ गयी तो उसके घर में भी 'ताराचरण की माँ, जयदेव की चचेरी बहन, शकुन्तला, रामपुरवाली और नरेश की मामी ने आकर तीन मंगल गीत गाये।'[१]

गाँव के लोग अपने गाँव, अपनी ग्रामदेवता आदि को छोड़ना नहीं चाहते हैं। उनकी इसके पीछे बड़ी ही पवित्र धारणा रहती है। जब जयकिशोर अपनी, माँ को ले जाना चाहता है तो उसकी माँ कहती है — 'पर्व और त्यौहार के दिनों

---

१ नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ.१२४

में देवता-पितर आवेंगे, आँगन-घर सूना रहेगा तो निराश लौट जायेंगे।' [१]

किसी पर यदि कोई व्यभिचार का आरोप हो तो उसे अपने आप को पवित्र सिद्ध करना पड़ता था। इसके लिए उसे कुछ भी करना पड़ता था। एक बार एक अभिजात ब्राह्मणी पर व्यभिचार का आरोप था। उसे अपने हाथ पर पीपल का पत्ता रखकर उस पर आग रखकर उसे शपथ लेनी पड़ी थी। प्रचलित प्रथा के अनुसार उसे अपने पावित्र्य को सिद्ध करना ही पड़ा था।

इस प्रकार कई तरह की रूढ़ियाँ गाँव में प्रचलित हैं। ये सभी रूढ़ियाँ उनके पिछड़ेपन को दर्शाती हैं।

(२) शगुन - अपशगुन -

शकुन - अपशगुन की बातें प्राचीन काल से ही चली आ रही हैं। आधुनिक काल में भी मानव समाज में कई तरह के शगुन - अपशगुन पाये जाते हैं। अगर राह चलते किसी व्यक्ति का बिल्ली रास्ता काट जाए तो वह आदमी रुक जाता है। शादी के वक्त भी अच्छा शगुन, अच्छा मुहरत देखा जाता है। अगर अच्छे मुहरत में काम शुरु कर दिया जाता है तो काम भी अच्छा होता है। यद्यपि कहा जाता है कि हम इक्कीसवीं सदी की ओर बढ़ रहे हैं तो भी शगुन - अपशगुनों को आज भी माना जाता है।

'रतिनाथ की चाची' में भी ऐसी घटनाएँ पायी जाती हैं। जब जयनाथ रतिनाथ को स्कूल में डालना चाहता था तब वह दिन गिनता है। वह कहता है -- 'विद्यारंभे गुरु: श्रेष्ठ: मतलब यह कि बृहस्पतिवार को विद्या का आरंभ करना अच्छा है।' [२]

---

१ नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ.१०३।

२ वही - पृ.३४।

जब रतिनाथ और जयकिशोर स्कूल जाने के लिए प्रवास कर रहे थे तब वे भी इसी तरह शगुन - अपशगुन के चक्कर में पड़ते है - ' स्कूल तेरह जुलाई को खुल रहा था। बारह और बारह को मंगल और बुधवार पड़ते थे। उत्तर की तरफ जाने में दिशा-शूल होता। इसीलिये जयकिशोर आषाढ़ शुक्ल पंचमी सोम को सपरिवार मोतिहारी चल पड़े।' [१]

इसी प्रकार गाँव के अन्य लोग भी शगुन - अपशगुन के चक्कर में हमेशा फँसे रहते थे। इसी का फायदा उठाकर मुहरत निकालने के लिए,अच्छी साईत बताने के लिए लोगों की कमजोरी का फायदा ब्राह्मण लोग उठाते थे और उनसे दक्षिणा के रूप में पैसे ऐंठते थे।

(३) पूजा - पाठ -

आज भी ग्रामीण समाज में लोगों का पूजा-पाठ कर्मकांडों पर इतना अटूट विश्वास है कि वे खाना भी भगवान को भोग लगाए बिना नहीं खाते। यहाँतक कि उनके दिन की शुरवात ही भगवान की पूजा से होती है और दिन का आखरी काम भी भगवान का नामस्मरण होता है। इस कदर वे भगवान के साथ जुड़े होते हैं। कभी-कभी उनके दैनिक जीवन की घटनाओं का परिणाम उनके पूजा - पाठ पर भी पड़ता है।

आलोच्य उपन्यास में जब गाँव की सभी महिलाएँ मिलकर जब रतिनाथ की चाची को बुरा-भला कहती हैं तो रतिनाथ अत्यंत उदास हो जाता है। भगवान की पूजा में उसका मन नहीं लगता। परंतु यही रतिनाथ जब गाँव छोड़कर (स्कूल के लिये) जा रहा होता है तब वह दु:खी होता है कि इस विश्वम्भर के फिर दर्शन होंगे भी या नहीं। जयनाथ तो हमेशा आधा घण्टा पूजा करने में ही लगा देता था। उन्हें पूजा-पाठ के साथ बाबा वैद्यनाथ,बाबा विश्वनाथ,दुर्गातारा-काली की चर्चाएँ करना अत्यंत प्रिय था। जयनाथ स्वयं कोई काम नहीं करते थे। जब

---

१ नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ.१०६।

कोई समस्या आ खड़ी होती तो कह उठते -- 'का चिन्तापम जीवने यदि हरिर्विश्वम्भरो गीयते ? यदि भगवान का नाम विश्वम्भर है तो फिर चिन्ता किस बात की ?' [१]

पहली बार जब पहला आम पका था तब जयनाथ ने रतिनाथ से कहा था कि तुम उसे सूँघ मत लेना। हम इससे भगवान को भोग लगाएँगे।

गाँव के भोला पण्डित हमेशा दुर्गासप्तशती का पाठ गुनगुनाते रहते थे। काम भी साथ-साथ चलता रहता था। बीच में कोई आ जाए तो उससे अस्फुट वाणी में बात भी किया करते थे। लेकिन उनमें बुराई यह थी कि वे पैसों की खातिर अनमेल ब्याह करते थे। उनका अव्यक्त ध्वनियों में बात करना किसी को खलता नहीं था क्योंकि ऐसी मान्यता थी कि धार्मिक ग्रंथ का पारायण करते समय बीच-बीच में बातचीत नहीं करनी चाहिए।

इसके साथ ही समय-समय पर होनेवाली विजयादशमी की दुर्गा-पूजा, सत्यनारायण कथा आदि तरह तरह की पूजाओं का भी चित्रण नागार्जुन ने किया है। इन सब पूजाओं के पीछे श्रद्धा की अपेक्षा अंधश्रद्धा ही अधिक दिखाई देती है। सिर्फ भगवान को खुश करने के लिए उनसे कुछ पाने के, स्वार्थ-पूर्ति हेतु ही इस तरह की पूजाएँ की जाती हैं।

(४) <u>मनौतियाँ --</u>

इन्सान अपनी स्वार्थसिद्धि हेतु सभी के तलवे चाटता फिरता है। अगर उसे किसी चीज की जरूरत है और वह उसे मिल नहीं रही है तो वह उसे पाने के लिए कुछ भी करने को तैयार रहता है। अपने इस भ्रष्टाचार में वह भगवान को भी नहीं छोड़ता है। वह उसे भी लालच दिखाता है। जैसे -- अगर किसी विद्यार्थी के मन में अपने परीक्षाफल के बारे में आशंका हो तो वह भगवान से कहेगा --

---

१ नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ.३१।

JI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

'भगवान मुझे पास कर दो। मै एक किलो मिठाई प्रसाद चढाऊँगा।' इसी प्रकार अन्य लोग भी भगवान को आमिष्ठा दिखाकर उनसे अपना स्वार्थ साधना चाहते है।

मनौतियाँ मानना इसी का एक प्रकार है। इसमें श्रद्धा और भक्ति की मात्रा बहुत कम रहती है और अंधविश्वास की मात्रा अधिक रहती है। किसी को अगर विश्वास हो कि मेरे यह कह देने पर से भगवान प्रसन्न हो जायेंगे और काम सफल हो जाएगा, तो उस विश्वास के आगे किसी की भी एक नहीं चलती।

आगे चलकर इन्ही मनौतियों से प्रथा का निर्माण हुआ होगा। लोग मनौतियाँ मानते थे कि भगवान मेरा यह काम कर दो मै तुम्हें कुछ दूँगा। फिर आगे चलकर लोगों का उसी में विश्वास निर्माण हो गया तो लोग कहने लगे कि भगवान मेरा यह काम हो जाए तो मै इस प्राणी की बली चढाऊँगा। फिर बली के लिए मुर्गियाँ, बकरियाँ आदि के साथ-साथ अन्य भी प्राणियों का इस्तेमाल किया जाने लगा।

'रतिनाथ की चाची' में भी नागार्जुन ने इसी परंपरा का इस्तेमाल किया है। उन्होंने गौरी की माँ द्वारा की गयी मनौति का जिक्र किया है। 'माँ ने दक्खिन की ओर मुँह करके दोनों हाथ उठा लिए और अति स्वर में गुनगुनाई -- 'दोहाई बाबा वैजनाथ की। इस मुसीबत से राजी-खुशी मेरी लड़की निकल गयी, तो गंगाजल भरकर मैं सुल्तानगंज से तुम्हारे धाम पहुँचूँगी।'[१]

इसी तरह गाँव के लोग मनौतियों में विश्वास रखते है और भगवान को प्रसन्न करने का प्रयास करते हैं। नागार्जुन ने अपने उपन्यास में उनका चित्रण किया है।

(५) भूत-प्रेतों में विश्वास --

मनुष्य की मौत हो जाने के बाद उसका क्या हो जाता है ? यह सवाल सब के मन में पैदा हो गया और फिर वही से भूत-प्रेतों की बातें चलने लगी। अगर

---

१ नागार्जुन - रतिनाथ की चाची- पृ.३८।

किसी व्यक्ति की मौत हो गयी है तब भी अगर उसकी कोई इच्छा शेष रही है तो वह भूतयोनि में जन्म ले लेगा और अपनी वह इच्छा पूरी करेगा । इसी बात पर जब लोगों को यकीन आने लगा तब से उससे अपनी इच्छाएँ भी पूरी करवाने के लिए से भी पूजा जाने लगा । रात के वक्त भूत बाहर निकलकर आते हैं यह सोचकर उन्हें रात में भोजन का भोग लगाया जाता था । उन्हें भी कई प्रकारों से प्रसन्न करने की कोशिश की जाती थी । लेकिन इन भूत-प्रेतों के प्रति लोगों के दिल में डर अधिक है क्योंकि अगर उन्हें पीछले जनम में किसी ने बहुत पीडा दी है तो वह इस जन्म में भूत-प्रेत बनकर उस व्यक्ति को बहुत बडी सजा दे देगा। इसलिए लोग सोचते हैं कि उन्हें प्रसन्न रखने से अच्छा होगा ।

नागार्जुन ने आलोच्य उपन्यास में इसी तरह लोगों के, विशेषकर ग्रामीण लोगों के भूत-प्रेत में विश्वास को दिखाया है । छोटे बच्चे भी किस तरह उनके प्रति विश्वास रखते हैं और किस तरह उसपर किये जानेवाले उपाय भी जानते हैं यह दिखाया गया है ।

रतिनाथ एक बार पाठशाला से किताबों की चोरी करता है । चोरी हो गयी है यह जानकर बच्चे विचार-विमर्श करने लगते हैं कि किसने की होगी ? 'साथी एक चिल्ला उठे -' अरे भाई, छोटी-छोटी किताबों की जरूरत और किसको पड़ी होगी । भूत-प्रेत तो ले नहीं गए होंगे । अच्छा, परसोनी का जूगल कामति कटोरा चलाना जानता है । जिस साले ने हमारी किताब ली होगी, उस पर अगर कटोरा न चलवाया, तो...' [१]

इस प्रकार हम देखते है कि उन छोटे बच्चों के मन में भी भूत-प्रेत के प्रति कितना विश्वास और डर भी है ।

(६) परंपराएँ --

हमारे समाज में पारंपारिक रूप से चली आ रही कुछ बातों को आधुनिक काल में भी माना जाता है । जैसे विजयादशमी के दिन रावण को जलाया जाना,

---

१ नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ.४७ ।

नरक चतुर्दशी के दिन राम के आगमन का आनंदोत्सव मनाया जाना, आदि कई तरह की परंपराएँ हमारे समाज में प्रचलित है। मनुष्य सदियों से उन्हीं परंपराओं का पालन करता आया है। परंपराएँ हमारे समाज की संस्कृति, सभ्यता आदि को दर्शाती है। सदियों से चली आ रही इन्हीं परंपराओं के कारण मनुष्य की सभ्यता का पता चलता है।

नागार्जुन ने 'रतिनाथ की चाची' में ऐसी कई परंपराओं का जिक्र किया है। जैसे - जयकिशोर हर साल अपनी बहन के पास भातृद्वितीया के अवसर पर चला जाता था। हमारे यहाँ हर भातृद्वितीया पर बहनें भाई की आरती उतारकर उसके उज्वल भविष्य की कामना करती हैं। और भाई उसे संरक्षण देने की बात करता है। उमानाथ भी हर साल अपनी बुआ के पास जब वह दिवाली के अवसर पर आता है, तो बहन के घर भातृद्वितीया को चला जाता है। लेकिन जब गौरी का सामाजिक प्रताड़न हुआ उस साल न ही उमानाथ और न ही जयकिशोर अपनी बहनों के पास गये। जयकिशोर ने तो रतिनाथ को ही अपनी बहन मान लिया जो उनके साथ पढने के लिए आ गया था।

'सौराठ का मेला' यह मिथिलांचल की एक और प्रचलित परंपरा थी। मैथिल के ब्राह्मणों का यह मेला था। 'सौराठ की सभा उस साल के वैशाख के ही अंत में हुई थी। उमानाथ की शादी पंडौल स्टेशन से पाँच कोस पश्चिम महनौली के एक खेतिहर ब्राह्मण की सयानीलड़की से हो गई। सिर्फ दो घण्टे लगे, बात पक्की हो गई। उमानाथ का यह ब्याह इतना चटपट तय हो जाएगा, किसे पता था। सौराठ में यही तो होता है। हजारों विवाहार्थी इकट्ठे होते है। कन्याओं की तरफ से उनके अभिभावक बड़ी तादाद में जमा रहते है। सभा में यदि कन्याएँ भी शामिल होती तो स्वयंवर का विराट पर्व न केवल भारत - भर में परंतु संपूर्ण विश्व में अद्वितीय कहलाता। तब सोनपुर के प्लेटफॉर्म और हरिहर क्षेत्र के मेले की तरह सौराठ की यह विराट सभा भी मशहूर हो गई।'[१]

---

१ नागार्जुन - रतिनाथ की चाची - पृ.११८।

निष्कर्ष --

नागार्जुन एक आंचलिक उपन्यासकार रहे है और बचपन से ग्रामीण समाज में रहने के कारण गाँव में होनेवाली समस्याएँ, रीतियाँ, रूढियाँ, परंपराएँ आदि जानते थे। गाँव की अंधश्रद्धाओं को उन्होंने भली-भाँति पहचाना। इन्हीं सामाजिक अंधश्रद्धाओं को उन्होंने अपने उपन्यास 'रतिनाथ की चाची' में उतारा है। सामाजिक अंधश्रद्धाओं के जितने रूपों को उन्होंने अपने इस उपन्यासों में उतारा है उससे उनका ग्रामीण जीवन का कितना गहन अध्ययन है, इस बात का पता चलता है।